‘मछुआरे’ एवं ‘सागर, लहरें और मनुष्य’ में स्त्री जीवन

‘MACHUARE’ EVAM ‘SAGAR, LAHAREN AUR MANUSHYA’ MEN STREE JIVAN

एम.फिल. हिंदी (तुलनात्मक साहित्य) उपाधि हेतु प्रस्तुत

लघु शोध-प्रबंध

सत्र- 2014-15

शोधार्थी

अमित कुमार

पंजीयन सं. : 2014/02/205/012

हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग

साहित्य विद्यापीठ

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

पोस्ट – हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा -442005 (महाराष्ट्र)

भूमिका

साहित्य अपने विविध रूपों में व्यक्त होकर मानव मन के भाव वैविध्य का परिचय देता है। साहित्य में अनेक विधाओं का समावेश होता है इसमें उपन्यास विधा का अपना अलग ही महत्व है। भारतीय उपन्यासों में किसान जीवन और नगरीय पृष्ठभूमि के अतिरिक्त भारतीय समाज में विविध पक्षों पर पचास के दशक के बाद लिखना आरंभ हुआ। भारतीय उपन्यासों में आंचलिकता का प्रभाव बाहर से नहीं आया। वह देश के भीतर फैले सामाजिक जीवन की विसंगतियों, व्यामोहों और स्वप्नभंग की स्थितियों से बना। लेकिन आंचलिकता की हवा में कुछ, समाज के अनछुए पक्षों पर कम बल दिया गया। इस दृष्टि से हिंदी में विविध अनछुए प्रसंगों पर जो थोड़े बहुत उपन्यास आए उनमें 'सागर, लहरें और मनुष्य' (उदयशंकर भट्ट, 1956 ई.) में मछुआरों के जीवन को लेकर लिखा गया उपन्यास काफी महत्वपूर्ण है।

इसी के समान अन्य भारतीय भाषाओं के उपन्यासों में भी सामाजिक जीवन का लगभग हर पक्ष दिखाई देता है। पाँचवे दशक में मलयालम में मछुआरों के जीवन से तादात्म्य स्थापित करके लिखा गया 'तकष़ी शिवशंकर पिल्लै' का उपन्यास 'मछुआरे' (चेम्मीन, 1956 ई.) इस दृष्टि से भारतीय साहित्य का एक उत्कृष्ट उपन्यास है। इन दोनों उपन्यासों की समस्याएँ एक जैसी होने के कारण यह कहना तर्कसंगत होगा कि इन उपन्यासों में आयी समस्याएँ काफी कुछ एक दूसरे से साम्य रखती हैं तथा मछुआरों के जीवन प्रक्रिया का खुलासा करती हैं। इसलिए मेरी रोचकता और बढ़ गयी और मैंने अपने एम.फिल. शोध के दौरान इन दोनों का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए सोचा। तकष़ी और भट्ट के उपन्यासों

को तुलनात्मक दृष्टि से परखने का एक कारण यह भी है कि ये दोनों उपन्यास तात्विक और परिवेश के स्तर पर अलग-अलग होते हुए भी अपने-अपने क्षेत्रों के मछुआरों की समस्याओं पर सवाल खड़ा करते हैं। कहना न होगा कि भारतीय समाज व्यवस्था में मछुआरों की अपनी भूमिका है, इनका जीवन जितना जटिल, सपाट और रूढ़ है उतना ही व्यंजक भी। पुरानी मान्यताओं और नए जीवन के द्वंद्व से ये लगातार जूझते रहे हैं। फिर भी इनके जीवन प्रसंगों को अनदेखा किया जाता रहा है। भट्ट और तकष़ी ने इनके संपूर्ण जीवन की जटिलताओं को उनकी समस्याओं को एक प्रेम कथा की पृष्ठभूमि पर गहराई से चित्रित किया है।

इन दोनों उपन्यासों में स्त्री समस्या को बड़े ही गहराई के साथ चित्रित किया गया है। उनमें स्त्री जीवन के सभी पहलुओं पर गंभीर एवं सचेत चिंतन किया गया है। मछुआरा समाज की स्त्रियाँ किस प्रकार का जीवन जीती हैं? किस प्रकार की आकांक्षाएं रखती हैं? किस प्रकार अन्याय तथा अत्याचार का शिकार होती हैं? और किस तरह का भटकाव समाज से पाती हैं? इन सभी पहलुओं पर उपन्यास प्रकाश डालता है।

तुलनात्मक अध्ययन पर केंद्रित शोध कार्य को सुविधा के लिए चार अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय **'रचनाकार का व्यक्तित्व और कृतित्व'** है। इस अध्याय को पुन: दो उपअध्यायों **'उदयशंकर भट्ट का व्यक्तित्व एवं कृतित्व'** और **'तकष़ी शिवशंकर पिल्लै का व्यक्तित्व एवं कृतित्व'** में विभाजित किया गया है। इस अध्याय के अंतर्गत दोनों ही उपन्यासों के लेखकों का जीवन परिचय व लेखन क्षेत्र में उनके योगदान पर चर्चा की गई है।

द्वितीय अध्याय **'सागर, लहरें और मनुष्य में स्त्री'** है। यह अध्याय तीन उपअध्यायों **'मुंबई का महानगरीय एवं तटीय स्त्री जीवन'**, **'लोक परंपराएँ एवं बाह्य आडंबर'** तथा **'सागर लहरें और मनुष्य में स्त्री जीवन'** में विभाजित है। जिसके अंतर्गत महानगरीय, ग्रामीण स्त्री

उपसंहार

भारतीय समाज अनेक वर्गों, उपवर्गों में बंटा हुआ है। हर वर्ग का व्यवसाय भी बटा हुआ है। मछुआरों के जीवन को आधार बनाकर साहित्य में जो भी उपन्यास लिखे गए उन सबमें उनके पारिवारिक व्यवसाय मछली मारने को आधार बनाया गया है। मछुआरों के जीवन को आधार बनाकर भारतीय साहित्य के विभिन्न भाषाओं में कविता, कहानी, उपन्यास आदि लिखे गए हैं। इन सभी विधाओं में उपन्यास एक ऐसी सशक्त विधा के रूप में स्थापित है जो गाँव, क्षेत्र की परिधि को लांघते हुए आज पूरे विश्व में व्याप्त हो गयी है। मछुआरा जीवन को लेकर उपन्यास विधा में बहुत से रचनाकारों ने लिखा जिनमें प्रमुख रूप से अर्नेस्ट हेमिंग्वे, तकष़ी शिवशंकर पिल्लै, नागार्जुन, मानिक बंधोपाध्याय, उदयशंकर भट्ट आदि हैं। इन उपन्यासकारों में प्रमुख रूप से तकष़ी शिवशंकर पिल्लै ने 'मछुआरे' (चेम्मीन, 1956 ई.) नाम से लिखा, वही उदयशंकर भट्ट ने 'सागर, लहरें और मनुष्य'(1956 ई.) नाम से रचना की। इन दोनों उपन्यासों के केंद्र में मछलीमार मल्लाहों के जीवन शैली, उनके रहन-सहन, उनके खान-पान, उनके आचार-विचार, संस्कृति, परंपरा एवं रूढ़ियों आदि को लेकर उपन्यास की सर्जनात्मक भावभूमि पर विशेष रूप से ध्यान देते हुए उनका यथार्थ दिखाया गया है। केरल के मछुआरा जीवन को 'मछुआरे' उपन्यास क्या पूर्ण रूप से चित्रित कर पाया है? और मुंबई के बरसोवा निवासी मल्लाहों के जीवन को लेकर के लिखे-उपन्यास उदयशंकर भट्ट ने क्या उनके सभी पक्षों को उपन्यास में जगह दे पाए हैं? इस बात पर विश्वास पढ़ने के बाद किया जा सकता है। इन दोनों उपन्यासकारों ने मल्लाहों के जीवन शैली को लेकर के तथा उनके जीवन में प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं को आधार बनाकर जो कुछ भी लिखा है, वह हमें

बहुत कुछ मछलीमारों के बारे में बता देने में सक्षम है। 'मछुआरे' में जहाँ अंधविश्वास को दिखाया गया है वहीं 'सागर, लहरें और मनुष्य' में प्रगतिशीलता को देखा जा सकता है। प्रगतिशील होने के कारण 'सागर, लहरें और मनुष्य' की मुख्य नायिका रत्ना अपनी जीवन शैली अपने ढंग से जीने के लिए स्वतंत्र है। वह किसी की भी बात को नहीं मानती और अपने विवेक का इस्तेमाल करती है। भले ही बाद में ठगी एवं छली जाती है। लेकिन यह बात 'मछुआरे' उपन्यास की नायिका के बारे में लागू नहीं होती वह अपने लिए स्वयं निर्णय नहीं ले सकती बल्कि उसके घर, उसके माँ-बाप और उस समाज में रहने वाले अन्य मछुआरों की बातों को स्वीकार करते हुए चलती है। मछुआरा जीवन बहुत ही कष्टप्रद है और इतना कष्ट सहने के बाद भी इन दोनों उपन्यासों के मछुआरों ने अपनी परंपरागत जीवन शैली को नही बदला है।

इन दोनों उपन्यासों की घटना उस समय के मछुआरों पर लागू होती है लेकिन आज 21वीं सदी में भी भारत के हर कोने में रहने वाले मछुआरों की जीवन चर्या को अभिव्यक्त करने में ये उपन्यास सफल रहे हैं। आज जहाँ अन्य समुदाय के लोग पढ़-लिखकर आगे बढ़ रहे हैं। वहीं मछुआरा समुदाय अपनी परंपरागत जीवन शैली को नहीं छोड़ पा रहा है। दोनों उपन्यासों की तुलना करते समय इन उपन्यासों में आयी स्त्री पात्रों का जीवन संघर्ष और समाज के रीति-रिवाजों से संबंध उनकी जीवन शैली का अध्ययन किया गया है, जिसमें यह देखा गया है कि केरल के तटीय इलाके में रहने वाली ये मछुआरिन स्त्रियाँ आज भी स्वतंत्र नहीं है बल्कि अपनी उसी पुराने ढर्रे पर जीने के लिए मजबूर हैं। तट पर मल्लाहों की पत्नियों के पवित्र रहने से ही यह होता है। ये पवित्रता का पालन न करें तो मल्लाह नाव सहित भँवर में पड़कर खत्म हो जाए। मछुआरों का जीवन वास्तव में तट पर रहने वाली उनकी स्त्रियों के हाथ

में ही है। लेकिन यह बात मुंबई की मछुआरिन स्त्रियों पर जब करते हैं तो देखते हैं कि केरल तटीय इलाकों में रहने वाली मछुआरिन स्त्रियों से उनका जीवन प्रवाह जीवन संघर्ष उच्च कोटी का है। अगर इसे दोहम मुंबई की निकटता माने या और कुछ कह सकते हैं। रत्ना अपने समाज बरसोवा से नफरत करती है। यहाँ के लोगों के इस काम से नफरत है। दुनिया इतनी आगे बढ़ गई है और हम अभी तक बाप-दादों की तरह मछली मार रहे हैं। न ऊँचाई, न रहन-सहन, न कुछ और। इस प्रकार दोनों उपन्यासों में स्त्री समस्या को बड़े ही तार्किक रूप से देखा गया है। एक तरफ 'मछुआरे' उपन्यास की स्त्रियाँ अपने मछुआरा समाज को छोड़ना नहीं चाहती वह उसमें दु:खी होकर भी खुश रहने की इच्छा व्यक्त करती हैं तो दूसरी ओर 'सागर, लहरें और मनुष्य' की स्त्रियाँ मुंबई की चकाचौंध के आगे अपने मछुआरा समाज से कटी जा रही हैं।

इस प्रकार आज मछुआरा समाज अपने ही जाति, क्षेत्र विशेष अंचल से कटता चला जा रहा है जो इस उपन्यास का मुख्य विषय है। तकष़ी ने इसी समस्या को आधार बनाकर 'चेम्मीन' उपन्यास का सृजन किया। 'चेम्मीन' (झींगा मछली) मंहगी मछलियों में सबसे सुंदर मछली है। उस मछली का नामोनिशान खत्म होता जा रहा है। उसी प्रकार समुद्र तट के सुंदर मछुआरे भी जीवन की खुरदरी चट्टानों पर टक्कर मार-मार कर समाप्त होते जा रहे हैं। साथ ही उन्हें मुख्य जीवनधारा से हटाया जा रहा है। इसी विषय को केंद्र में रखकर ही तकष़ी ने इस उपन्यास का नाम चेम्मीन रखा है और उदयशंकर भट्ट ने भी रत्ना के माध्यम से नगरीय समाज की और ग्लैमर भरी दुनिया से भ्रमित होकर एक स्त्री किस तरह से अपने मछुआरा समाज से अलग हो जाती है इसका यथार्थ दिखाया गया है। इन दोनों स्थितियों को उदयशंकर भट्ट और तकष़ी शिवशंकर पिल्लै ने भली भाँति से देखा और समझा है।

तकषी पर बहुत दिनों तक मोपाँसा एवं बांग्ला शैली का प्रभाव रहा। लेकिन भारतीय समाज का चित्रण करते हुए वे इतने रमे कि उन सभी शैलियों से हटकर यथार्थ के धरातल पर उनका बारीकी से पर्यवेक्षण करने में सफल रहे। उदयशंकर भट्ट ने व्यक्तिवादी चिंतन से स्वयं को मुक्त करके 'सागर, लहरें और मनुष्य' में मछुआरा जीवन की कथा की पृष्ठभूमि पर जिस तनाव की सर्जना की है वह बदलाव की प्रक्रिया का तनाव है।

इन दोनों उपन्यासों की अंतर्वस्तु की जाच-पड़ताल करने पर पता चलता है कि दोनों उपन्यासों में अनेक प्रकार की समानताएं और असमानताएं होने के बावजूद आने वाले कल की समस्याओं को वर्तमान की समस्याओं से जोड़कर दिखाने का प्रयास किया गया है। इसके दोनों जगह अलग-अलग रूप देखने को मिलते हैं। तकषी में अस्तित्व और पुरानी मान्यताओं का संघर्ष है तो भट्ट में अस्तित्व और अनास्तित्व के बीच संघर्ष है। तकषी के उपन्यास के पात्रों में रूढ़-परंपराओं, मान्यताओं के बावजूद एक गहरी हताशा और असंतोष की गहराई देखने को मिलती है। घटवार के माध्यम से सामंती जड़ व्यवस्था का आतंक दिखाया है और यह भी बताने की कोशिश की है कि रूढ़ परंपराओं, मान्यताओं के संस्कार में ढली करुतम्मा अपने संप्रदाय के आगे प्रेम को महत्व नहीं देती है। पात्रों के भीतर का आक्रोश और खीझ कभी भी और किसी समय अपनी जकड़बंदियों के खिलाफ खड़े हो सकते हैं। लेकिन भट्ट के पात्रों में वह आक्रोश और खीझ नहीं दिखाई पड़ता है। लेकिन गांव और शहर के तनाव से बदलाव की प्रक्रिया से वे बेखबर नहीं है। रत्ना को अचानक डॉ. पांडुरंग द्वारा अपनाना यह नए-पुराने के द्वंद्व में उपभोक्तावादी रुख की जीत ही है। दोनों उपन्यासों में पात्रों के स्वभाव विश्लेषण में लेखक ने मनोवैज्ञानिक आधारों का सहारा लेकर उनकी विचित्रताओं, भिन्नताओं का उद्घाटन कर इस सत्य को दिखाया है कि एक ही समुदाय, जाति विशेष में

पहले वाले व्यक्तियों में कितना अंतर हो जाता है। इससे पात्रों की सजीवता, मौलिकता का भी पता चलता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में मछुआरों की स्थिति काफी दयनीय है वह आज भी गरीबी, अंधविश्वास और अशिक्षा में जी ही नहीं रहा है बल्कि यह समाज आज भी पिछड़ा एवं उपेक्षित है। इस पर जितना भी शोध किया जाए उतना ही कम है।

दोनों उपन्यासों का अध्ययन करते समय स्त्रियों के संबंध में जो बातें उभर कर आयी हैं, उसमें समाज की स्त्रियों का रहन-सहन, आचार-विचार तथा उनके यौन-संबंधों में खुलापन होने के पीछे जो कारण समझ में आता है वह इस समाज की स्त्रियों का पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर, मेहनत मजदूरी करना हो सकता है क्योंकि इससे वे आत्मनिर्भर होती हैं। आज भी समाज में स्त्रियों के आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता महसूस होती है जिससे वे किसी के दबाव में नहीं रह सकती हैं। स्त्री जीवन के सभी पहलुओं पर गंभीर एवं सचेत चिंतन किया गया है। मछुआ समाज की स्त्री किस प्रकार का जीवन जीती है? किस प्रकार की आकांक्षाएं रखती है? किस तरह अन्याय और अत्याचार का शिकार होती है? किस तरह का भटकाव समाज से पाती है? इन सभी पहलुओं पर उपन्यास प्रकाश डालता है। इसमें रत्ना और एक ऐसी नारी है जो उन अनेक नारियों का प्रतिनिधित्व करती है जो मछुआरों की जीवन शैली में नाटकीय जीवन जीने को अभिशप्त है। सागर की लहरों के साथ जीवन के थपेड़ों से जूझती मछुआरीन स्त्रियाँ अपनी पूरी जीवंतता के साथ उपन्यास में चित्रित है। उनके दैनिक जीवन का संघर्ष यथार्थ रूप में चित्रित हुआ है। साथ ही उनके रहन-सहन, आचार-विचार तथा उनके यौन संबंधों का खुले रूप में चित्रण देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ

1. भट्ट, उदयशंकर. (2014). सागर, लहरें और मनुष्य. दिल्ली. आत्माराम एण्ड संस. ISBN No: 81-7043-616-8

2. पिल्लै, तकषी शिवशंकर. (2014). अनुवादिका –भारती विद्यार्थी. मछुआरे. नई दिल्ली. साहित्य अकादेमी. ISBN No: 978-81-260-2609-8

सहायक संदर्भ ग्रंथ

1. सिंह, डॉ. रंजना. (2009). हिंदी के आंचलित उपन्यास. इलाहाबाद. अस्मिता प्रकाशन. ISBN No: 978-81-905720-7-2

2. गर्ग, डॉ. नीलम मैगज़ीन. (2004). सागर, लहरे और मनुष्य: आंचलिक कथा प्रयोग. कानपुर. ज्ञानप्रकाशन

3. त्रिपाठी, डॉ. रामछबीला. (2008). भारतीय साहित्य. नयी दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 978-81-8143-605-4

4. मालती, डॉ. के.एम. (2010). स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 978-93-5000-288-9

5. किरण, डॉ. ज्योति. (2004). हिंदी उपन्यास और स्त्री जीवन. दिल्ली. मेघा बुक्स. ISBN No: 81-8166-067-6

6. नागार्जुन. (2003). वरुण के बेटे. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 81-7055-204-4

7. गोपीनाथन, जी. (1998). केरल की सांस्कृतिक विरासत. नयी दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 81-7055-610-4

8. परदेशी, डॉ. अर्चना. (2011). भारतीय संस्कृति एवं लोकगीत. जयपुर. वाइट पब्लिकेशन

9. दुबे, श्याम सुंदर. (2004). लोक परंपरा पहचान एवं प्रवाह. दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन

10. चतुर्वेदी, सत्येन्द्र. (1986). उदयशंकर भट्ट. व्यक्तित्व, कृतित्व ओर जीवन दर्शन. जयपुर. देवनागर प्रकाशन

11. जैन, नेमिचंद. (2002). अधूरे साक्षात्कार. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 81-7055-175-7

12. शर्मा, डॉ. रामविलास. (2005). समालोचक. नई दिल्ली. अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा.लि. ISBN No. 81-7975-103-1

13. चौधुरी, इंद्रनाथ. (2014). तुलनात्मक साहित्य भारतीय परिप्रेक्ष्य. नयी दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN No: 978-93-5000-810-2

14. राय, प्रो. गोपाल. (2005) हिंदी उपन्यास का इतिहास. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन. ISBN No: 978-81-267-1728-6

15. मधुरेश. (2014). हिंदी उपन्यास का विकास. इलाहाबाद. सुमित प्रकाशन

16. अहूजा, राम. (2010). भारतीय समाज. जयपुर. रावत पब्लिकेशन. ISBN No: 81-7033-640-6

17. माचवे, डॉ. प्रभाकर. (1993). भारतीय उपन्यास कथासार. कलकत्ता, भारतीय भाषा परिषद

18. सिंह, तुलसी नारायण. (2009). 14 भारतीय उपन्यास. दिल्ली. शब्दसृष्टि प्रकाशक. ISBN No: 81-88077-36-4

19. श्रोत्रिय, प्रभाकर. (2005). ज्ञानपीठ पुरस्कार (1965-2002). नयी दिल्ली. भारतीय ज्ञानपीठ. ISBN No: 81-263-1140-1

20. तिवारी, डॉ. रामचंद्र. (2009). हिंदी का गद्य साहित्य. वाराणसी. विश्वविद्यालय प्रकाशन. ISBN No: 978-81-7124-870-4

21. जोशी, ज्योतिष. (2005). आलोचना की छबियाँ. नई दिल्ली. मैत्रेय पब्लिकेशंस. ISBN No: 81-88468-02-9

कोश

गोपीनाथन, प्रो. जी. (2008). तुलनात्मक साहित्य विश्वकोश (प्रथम खंड: सिद्धांत एवं अनुप्रयोग). वर्धा. म.गा.अं.हि.वि.वि.

पत्र-पत्रिकाएँ

1. अहमद, डॉ. एम. फ़िरोज. (आदिवासी विशेषांक-1). अलीगढ़. वाङ्मय प्रकाशन. ISSN No: 0935-8321

2. मिश्र, डॉ. भारतेंदु. अग्रवाल, डॉ. बलराम. (संयुक्तांक मार्च व जून, 2015 अंक 05-06). शोध-समालोचना. गाजियाबाद. ISSN No: 2348-5639

3. R, Dr. Suresh. (Jan-Jun 2010). Holistic Thought. Kerala. Behalf of Sree Narayan College. Kollam

वेबसाइट :

www.hindisamay.com